15,17 नवम्बर 2006
जिनवाणी, 138

श्रावक-प्रतिक्रमण में श्रमणसूत्र के पाँच पाठों की प्रासंगिकता नहीं

श्री धर्मचन्द जैन

श्रमण एवं श्रावक के प्रतिक्रमण में अन्तर को स्पष्ट करते हुए श्री जैन ने श्रावक प्रतिक्रमण में पृथक् से बोले जाने वाले पाँच पाठों के संबंध में चर्चा की है। *-सम्पादक*

साधक के अनेकानेक आवश्यक कर्त्तव्यों में एक कर्त्तव्य है-प्रतिक्रमण। प्रतिक्रमण का शाब्दिक अर्थ है पीछे की ओर लौटना। स्वीकृत व्रत-नियमों एवं मर्यादाओं में जो भी कोई अतिचार लगे हों, उनकी आलोचना कर पुनः मर्यादा में स्थिर होने को प्रतिक्रमण कहते हैं। प्रतिक्रमण का मूल नाम आवश्यक है। आवश्यक के छः भेद किये गये हैं- सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव, वन्दना, प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग और प्रत्याख्यान आवश्यक।

इन छह आवश्यकों में प्रतिक्रमण आवश्यक सबसे महत्त्वपूर्ण होने के कारण आवश्यक सूत्र को प्रतिक्रमण सूत्र के नाम से भी जाना जाता है। प्रथम के तीन आवश्यक भूमिका रूप में हैं तथा चौथे प्रतिक्रमण आवश्यक के बाद के दो आवश्यक उत्तर क्रिया के रूप में हैं।

श्रमण व श्रावक प्रतिक्रमण में अन्तर -

साधु-साध्वी हों चाहे श्रावक-श्राविका हों, सभी के लिये उभयकाल प्रतिदिन प्रतिक्रमण करना आवश्यक है, तथापि दोनों के प्रतिक्रमण में कुछ अन्तर भी है -

साधु-साध्वियों द्वारा उभयकाल किया जाने वाला प्रतिक्रमण श्रमण- प्रतिक्रमण कहलाता है तथा श्रावक-श्राविकाओं द्वारा उभयकाल किया जाने वाला प्रतिक्रमण श्रावक-प्रतिक्रमण कहलाता है।

साधु-साध्वी पाँच महाव्रत, पाँच समिति, तीन गुप्ति आदि का तीन करण तीन योग से जीवन भर के लिये पालन करते हैं, अतः उनके प्रतिक्रमण में तिविहं तिविहेणं, मणेणं, वायाए, काएणं शब्द बोले जाते हैं। जबकि श्रावक व्रत-नियमों को अपनी शक्ति, सामर्थ्य एवं योग्यता के अनुसार अलग-अलग करण योगों से धारण करते हैं, अतः श्रावक प्रतिक्रमण में बारह व्रतों की आलोचना में कहीं एक करण एक योग, कहीं एक करण तीन योग तो कहीं दो करण तीन योग शब्दों के प्रयोग किये जाते हैं। श्रमण प्रतिक्रमण में 'समण' शब्द का प्रयोग होता है जबकि श्रावक प्रतिक्रमण में 'सावग' शब्द का प्रयोग होता है। श्रमण प्रतिक्रमण में पाँच पाठ अलग से बोले जाते हैं, किन्तु श्रावक प्रतिक्रमण में नहीं बोले जाते हैं-

पाँच पाठों की प्रासंगिकता नहीं -

यद्यपि कतिपय परम्पराएँ श्रावक प्रतिक्रमण में भी श्रमण सूत्र के पाँच पाठों को बोलती हैं एवं बोलना अनिवार्य मानती हैं। यहाँ हम यह विचार करें श्रमण सूत्र के निम्न पाँच पाठों को श्रावक प्रतिक्रमण में बोलना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपयुक्त है अथवा नहीं?

पाँच पाठ – १. निद्रा दोष निवृत्ति का पाठ (शय्या सूत्र) २. गोचरीचर्या का पाठ, ३. काल प्रतिलेखना का पाठ, ४. असंयम आदि ३३ बोलों का पाठ, ५. निर्ग्रन्थ प्रवचन का पाठ (प्रतिज्ञा सूत्र।

(१) निद्रादोष निवृत्ति (शय्या सूत्र)- यह तर्क दिया जाता है कि श्रावक को भी पौषध, दया, संवर आदि प्रसंगों में निद्रा में लगे दोषों की निवृत्ति हेतु यह पाठ बोलना आवश्यक है। किसी दूसरे पाठ से निद्रा दोष की निवृत्ति नहीं हो पाती।

ऐसा कहना उपयुक्त नहीं, क्योंकि दया, पौषधगत सभी दोषों की आलोचना ग्यारहवें पौषधव्रत के पाँच अतिचारों से हो जाती है। उसमें भी पाँचवाँ अतिचार पोसहस्स सम्मं अणणुपालणया अर्थात् पौषध का सम्यक् प्रकार से पालन न किया हो, के अन्तर्गत दोषों का शुद्धीकरण हो जाता है। पौषध के १८ दोषों में से किसी दोष का सेवन हुआ हो तो उसके लिये भी ग्यारहवें व्रत में 'मिच्छामि दुक्कडं' दिया जाता है।

(२) गोचरीचर्या का पाठ- अनेक श्रावक दयाव्रत की आराधना में गोचरी करते हैं। प्रतिमाधारी श्रावक भी गोचरी लाते हैं, अतः श्रावकों को गोचरी में लगे अतिचारों की शुद्धि करने हेतु गोचरीचर्या का पाठ बोलना आवश्यक है, ऐसा तर्क दिया जाता है।

किन्तु प्रायः वर्तमान में श्रावकों द्वारा ग्यारहवीं उपासक प्रतिमा स्वीकार करने का प्रसंग ही नहींवत् आता है। ग्यारहवीं श्रावक प्रतिमा के लिये ही गोचरी का विधान है, अतः यह स्पष्ट है कि गोचरीचर्या का पाठ श्रमणों के लिये ही है।

(३) काल प्रतिलेखना का पाठ-अनेक श्रावक-श्राविका दया-पौषध आदि में चारों काल स्वाध्याय करते हैं, स्वाध्याय करने में जो अतिचार लगे हों उनकी शुद्धि हेतु यह पाठ बोलना आवश्यक है,ऐसा कहा जाता है।

यह सही है कि श्रावक भी पौषध, दया में उभयकाल प्रतिलेखन करते हैं, कई विशेष धर्म-श्रद्धा वाले चारों कालों में स्वाध्याय भी करते हैं। पौषध में लगे अतिचारों की शुद्धि तो पौषध पारने के पाठ से हो ही जाती है। सामान्य श्रावक के दोनों वक्त प्रतिलेखन का नियम भी नहीं होता। शायद ही कोई ऐसा श्रावक हो जो उभयकाल फर्नीचर, प्लास्टिक, काँच एवं स्टील के बर्तन, कपड़े आदि की प्रतिलेखना करता हो।

साधु के लिये तो दोनों समय प्रतिलेखन तथा प्रतिदिन चारों काल स्वाध्याय करना आवश्यक है, अतः साधु-साध्वी के लिये ही यह पाठ बोलना आवश्यक है, श्रावक श्राविकाओं के लिए नहीं।

(४) असंयम आदि १ से ३३ तक बोल- कुछ परम्पराओं का मन्तव्य है कि इन ३३ बोलों में कुछ बोल हेय, कुछ ज्ञेय तथा कुछ उपादेय हैं। अतः ३३ बोलों का ज्ञान श्रावकों के लिये अनिवार्य है, इसलिये श्रावक प्रतिक्रमण में बोलना आवश्यक है।

मात्र ज्ञेयता के आधार पर श्रमण सूत्र के पाठों को श्रावक-प्रतिक्रमण में जोड़ना योग्य नहीं कहा जा सकता। फिर तो ५ महाव्रत, ५ समिति, ३ गुप्ति, ६ कायरक्षा के पाठ भी श्रावक के लिये ज्ञेय हैं तथा पौषध आदि के अवसरों पर, मनोरथ चिन्तन के समय ध्यातव्य हैं, वे पाठ श्रावक-प्रतिक्रमण में क्यों नहीं जोड़े जाते? देखा जाय तो इन ३३ बोलों का वर्णन उत्तराध्ययन सूत्र के ३१ वें अध्ययन में किया गया है। वहाँ उल्लेख है -

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जे भिक्खू रुंभइ णिच्चं, जे भिक्खू चयइ णिच्चं...इनसे फलित होता है कि ३३ बोलों का साधु-भिक्षु के साथ ही घनिष्ठ सम्बन्ध है।

(५) निर्ग्रन्थ प्रवचन का पाठ (प्रतिज्ञा सूत्र)- इस पाठ में निर्ग्रन्थ प्रवचन की महिमा है, अतः श्रावकों के लिये उपयोगी है। ऐसी युक्ति दी जाती है।

इसके उत्तर में कहना होगा कि इस पाठ में असंयम, अब्रह्म, आरम्भ आदि के पूर्ण त्याग की प्रतिज्ञा की जाती है। इन पापों के पूर्ण त्याग की प्रतिज्ञा श्रमण ही कर सकते हैं। श्रावक पूर्ण त्यागी नहीं हो पाते हैं।

इस पाठ के मध्य में कहा है- *समणोऽहं संजय विरय...*। यह प्रतिज्ञा भी साधु ही कर सकता है, कारण कि श्रावक तो संयतासंयत तथा विरताविरत होता है। यदि वह स्वयं को संयत विरत कहता है तो उसे माया, असत्य का दोष लगता है। प्रतिमाधारी श्रावक के लिये भी दशाश्रुतस्कन्ध में उल्लेख मिलता है कि यदि कोई उससे अपना परिचय पूछे तो वह कहे कि मैं श्रमण नहीं श्रमणोपासक हूँ।

उक्त पाँचों पाठ श्रमण सूत्र के हैं, श्रमणों के लिये हैं, श्रावकों के लिये नहीं। आगमों में कहीं पर भी 'श्रावक' को 'श्रमण' शब्द से सम्बोधित नहीं किया है। किसी भी टीका, कोश, भाष्यादि में भी श्रमण का अर्थ श्रावक नहीं किया है।

कभी-कभी भगवती सूत्र शतक २० का आधार लेकर कहा जाता है कि श्रमण में श्रावक भी सम्मिलित है। वहाँ कहा है- *तित्थं पुण चाउवण्णाइणो समणसंघे तं जहा - समणा, समणीओ, सावया, सावियाओ।*

वहाँ श्रमण-संघ का तात्पर्य श्रमण का संघ है। भगवान् महावीर को श्रमण कहा है- 'यथा समणे भगवं महावीरे' भगवान् महावीर के संघ को श्रमण संघ कहा जाता है। श्रमण संघ का एक अन्य अर्थ श्रमण प्रधान संघ है। श्रावक को ही यदि श्रमण माना जाय तो फिर भगवान् श्रावक को श्रमणोपासक क्यों कहते।

अनुयोगद्वार सूत्र में गाथा उल्लिखित है - *समणेणं सावएणं य अवस्सं कायव्वं, हवइ जम्हा - अंतो अहो णिस्सिस्स य, तम्हा आवस्सयं णामं।* श्रमण/श्रावक के द्वारा उभयकाल अवश्य करणीय होने से इसे आवश्यक कहा जाता है। यदि श्रमण शब्द से ही 'श्रावक' ध्वनित होता है तो आगमकार श्रमण तथा श्रावक इन दोनों शब्दों का भिन्न-भिन्न प्रयोग नहीं करते।

तीर्थंकर देवों ने 'श्रमण' शब्द का प्रयोग साधु के अर्थ में किया है, श्रावक के अर्थ में नहीं। ऐसी स्थिति में श्रमण सूत्र पाठों को श्रावकों के प्रतिक्रमण में जोड़ना आगमों के अनुकूल प्रतीत नहीं होता।

कतिपय लोगों द्वारा ऐसा भी कहा जाता है कि श्रमण सूत्र के उक्त पाँच पाठों के बिना तो श्रावक प्रतिक्रमण अपूर्ण है, गलत है। किन्तु उक्त तथ्यों से यह भलीभाँति स्पष्ट हो जाता है कि पाँच पाठों के बिना भी श्रावक का प्रतिक्रमण परिपूर्ण है। आवश्यक है प्रतिक्रमण के पाठों के साथ अर्थ समझने, भावों को तदनुरूप बनाने तथा अपने जीवन को संयमित, नियमित एवं वैराग्य से सुवासित करने की। जितनी जितनी समता, सरलता, विनम्रता एवं निर्लोभता जीवन में प्रकट होगी, उतना ही साधक जीवन उन्नत समुन्नत बनेगा तथा साधक की आत्मा भी शुद्ध बन सकेगी।

-रजिस्ट्रार, अ.भा.श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, घोड़ों का चौक, जोधपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org